पुरुष पाठकों से संवाद

कमला भसीन

सबला में शुरू किये गये नये स्तंभ 'पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र' का हमारे भाईयों ने खूब स्वागत किया है। हमें बहुत से पाठकों ने पत्र लिखे हैं और अपने विचार भेजे हैं। इन पत्रों ने हमारा हौसला बढ़ाया है और एक बहस की भी शुरुआत की है। इस स्तंभ के जवाब में आये सब पत्रों को छापना तो मुश्किल है इसलिये हम केवल कुछ पत्र ही छाप पायेंगे। हम खास तौर से उन पत्रों को छाप रहे हैं जिनमें कुछ मुद्दे उठाये गये हैं, जिन पर बातचीत ज़रूरी है।

लेकिन हम केवल पत्रों से संतुष्ट होने वाले नहीं हैं। हमें उम्मीद है कि हमारे पुरुष पाठक लेख और कवितायें भी भेजेंगे। औरतों के बारे में लेख मिल जाते हैं। औरतों को दिये जाने वाले सुझाव, नसीहत भी आसानी से मिल जाती है। हमें आज ज़रूरत महसूस होती है ऐसी कार्यवाहियों की जहां पुरुष पुरुषों के साथ बातचीत करें, उनके विचारों, व्यवहारों को बदलने की कोशिश करें।

सामाजिक समस्या

जैसा हमने पहले भी कहा था समस्या महिलाओं की नहीं है, समस्या सामाजिक है, स्त्री-पुरुष संबंधों की है। दहेज क्या औरतों की समस्या है? बलात्कार क्या स्त्रियों का ही मुद्दा है? क्या बलात्कार पुरुषों का मुद्दा नहीं है? क्या समाज का इस हिंसा से कोई सरोकार नहीं है? क्या बलात्कार की खबर सुनकर पुरुषों को गुस्सा नहीं आता या नहीं आना चाहिये? फिर क्या कारण है कि दहेज के खिलाफ सिर्फ़ महिलायें और महिला समूह ही आवाज उठाते हैं? बलात्कार पर मोर्चे सिर्फ़ औरतों को ही क्यों निकालने पड़ते हैं? क्यों इन मुद्दों पर सब पुरुष एक हो जाते हैं? अगर ऐसा नहीं है तो फिर खामोशी क्यों? राजनैतिक पार्टियां, ट्रेड यूनियनें कितनी बार वो मुद्दे उठाती हैं जिनसे औरतें परेशान हैं? क्या हम समाज का आधा हिस्सा नहीं हैं?

बहुत से संवेदनशील पुरुष स्त्रियों के साथ, स्त्रियों के लिये काम करते रहे हैं। उनकी हम सराहना करते हैं और स्वागत करते हैं। लेकिन हम ये भी चाहते हैं कि पुरुष पुरुषों के साथ भी काम करें। जहां मौक़ा पड़े वहां स्त्री-पुरुष समस्याओं पर बातचीत करें। हमारी नज़र में बहुत कम ऐसी समस्याएं हैं जो सिर्फ औरतों की हों, और ऐसी कोई समस्या नहीं है जिसका औरतों से सरोकार न हो।

हमारे स्तर पर हमने पुरुषों से बातचीत शुरू की है। उनके साथ स्त्री-पुरुष समस्याओं पर गोष्ठियां करनी शुरू की हैं। हमें लगता है इन सब समस्याओं पर गहराई से और ठंडे दिमाग से सोचना ज़रूरी है। हमें बहुत खुशी है कि 'सबला' में यह संवाद शुरू हुआ है।

पुरुष पाठकों के दो पत्र

मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) से सनातन धर्म कालेज के प्रिंसीपल डाक्टर एल.एन. मित्तल ने लिखा है:—

"महिला समानता या नारी आंदोलन सामाजिक

बदलाव की प्रक्रिया के अंश हैं। संपूर्ण भारत पितृ-सत्तात्मक नहीं है। जहां मातृ-सत्तात्मक समाज है वहां भी नारी समस्या है।

"महिला पत्रिका के माध्यम से जो बात मैं कहना चाहता हूं वह मुख्यतः महिलाओं से ही है। महिलाएं—पढ़ी-लिखी और अनपढ़, दोनों—अपने होना चाहिए।

"दूसरे, महिलाओं को स्वयं अपने दायरे से बाहर आना है। शहरी या ग्रामीण, दोनों महिलाएं—पढ़ी-लिखी और अनपढ़ दोनों—अपने पतियों को रसोई का काम नहीं करने देंगी। ...घर-गृहस्थी के काम में बदलाव लाना होगा। अपना समय गेहूं साफ करने, मसाला पीसने और खाने के चटपटे सामान बनाने में कम लगाकर अन्य आय-जनित कार्यों में लगाएं। ...मर्द तो औरतों के घर के काम के बोझ को कम करने को तैयार हैं, औरतें उन्हें रसोई में घुसने कहां देती हैं।

"कामकाज के स्थान पर स्त्रियों से छेड़छाड़ भी कुछ कम हो जाए यदि महिलाएं रियायत न मांगें और कुछ कम बने-संवरें। कार्यस्थल पर सादे कपड़ों में आएं। पता नहीं क्यों टी.वी. पर जो स्त्रियां विभिन्न कार्यक्रमों में आती हैं इतना बनाव-श्रृंगार करती हैं?"

टिप्पणी

मित्तल साहब की बहुत सी बातों से हम सहमत हैं। महिलाओं के बारे में जो बातें उन्होंने लिखी हैं वो अक्सर कही जाती हैं। बातें सही भी हैं। हमें सोचना ये है कि औरतें ऐसा व्यवहार क्यों करती हैं। क्या कारण है इसके पीछे।

वैसे, अगर मित्तल साहब ने पुरुषों के व्यवहार के बारे में भी कुछ लिखा होता तो ज़्यादा अच्छा लगता। औरतों को उनकी समस्याओं का ज़िम्मेदार ठहरा कर पुरुष अपनी ज़िम्मेदारी से बच नहीं सकते।

मित्तल साहब ने लिखा है कि "कामकाज के स्थान पर स्त्रियों से छेड़छाड़ भी कम हो जाये यदि महिलाएं रियायत न मांगें और कुछ कम बनें संवरें"। यानि छेड़खानी की ज़िम्मेदार भी पूरी तरह से औरतें खुद हैं। छेड़ने वालों को मित्तल साहब ने बिलकुल बरी कर दिया। इस तरह की सोच ग़लत ही नहीं ख़तरनाक भी है। अगर हम सब औरों को सबक सिखाने का (और वो भी छेड़खानी करके या किसी और प्रकार की हिंसा करके) अधिकार अपने हाथ में ले लें तो समाज नहीं चल सकता।

कोटा (राजस्थान) से श्री एम.एल. भटनागर ने लिखा है:—

अप्रैल-मई '92 के 'सबला' अंक से नये स्तंभ 'पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र' एक अच्छी शुरुआत है।

वस्तुतः प्रगतिशील/संजीदा/अनुभवी पुरुष नारी उत्थान में विशेष योगदान कर सकते हैं।

पति नामधारी व्यभिचारी व्यक्ति को मैं तो 'पति' नहीं मानता। पुस्तक का नाम स्मरण नहीं आ रहा— उसमे व्यभिचारी की पाशविक वृत्ति का जीता-जागता चित्र रोंगटे खड़े करने वाला है—

"गिद्ध और मुर्दा गोश्त। पुरुष और जिन्दा गोश्त। दोनों खेल एक से ही हैं। फर्क है तो सिर्फ इतना ही कि गिद्ध मुर्दा गोश्त को नोच-नोच कर उदर में डालता है और पुरुष जिन्दा गोश्त को नोचता-खरोंचता है, चचोड़ता है और अगर पुरुष का वश चले तो वह जिन्दा गोश्त को भी नोच-नोच कर खा जाये, पर वश नहीं चलता!"